शिक्षक का मूल्यांकनः एक पेचीदा प्रश्न

शिवरतन थानवी

शिक्षक की सही पहचान विद्यार्थी के सिवाय कोई नहीं कर सकता। शिक्षक के रूप में उनका असली चेहरा विद्यार्थी ही देखता है। उसका सबसे अधिक प्रभाव उसी पर पड़ता है। सबसे अधिक नफा-नुकसान शिक्षक के कारण यदि किसी का होता है तो विद्यार्थी का ही होता है। लेकिन इसका यदि कोई यह अर्थ निकालना चाहे कि तब तो अमेरिका की तरह शिक्षकों का मूल्यांकन विद्यार्थियों से ही करा लिया जाए तो वह भी गलत होगा। विद्यार्थी उसका मूल्यांकन आज नहीं कर सकता। मूल्यांकन करने की शक्ति उसे देते ही वह विद्यार्थी की भूमिका से हटकर दण्डनायक की भूमिका में चला जाएगा। उसकी दृष्टि वह रहेगी ही नहीं जो एक सच्चे विद्यार्थी की होती है।

मेरे एक शिक्षक थे। वे मुझे भूगोल पढ़ाया करते थे और गणित भी। सवाल गलत होता तो वे मेरी जांघ की चमड़ी अंगूठे और तर्जनी से पकड़ कर दबोचते-खींचते-उमेठते थे कि मेरी आंखों से टपटप आंसू गिरने लगते। कई दिन तक लाल-हरा निशान बना रहता उस स्थान पर। वे भूगोल पढ़ाते तब नक्शे में कोई केप कोमोरिन या न्यू फाडण्ड लैंड या टेंगानिका ढूंढ़कर नहीं बता पाता तो उनका रूलर चल पड़ता था। आप मुझसे या मेरे सहपाठियों से उस वक्त उनका मूल्यांकन करने को कहते तो हमारी क्या प्रतिक्रिया होती? यही न कि उन्हें तत्काल हटा दिया जाना चाहिए! लेकिन चालीस-पचास साल बाद आधुनिक शिक्षाशास्त्रीय सिद्धांतों के एकदम विपरीत पाने के बावजूद उन्हें याद करता हूं तो श्रद्धावश मेरी आंखें नम हो जाती हैं। वे दिखावटी बिल्कुल नहीं थे। रंग गोरा, नाक तीखी, आंखें नीली-सी, लंबा कद, खुले गले का कोट, कभी टाई, कभी कालर खुली, कभी पैंट, तो कभी धोती भी। दांत चमकदार, सुंदर पंक्ति में, लेकिन हंसते पूरे कभी नहीं थे। मामूली मुस्कुराहट हर दम चेहरे पर रहती थी। दण्ड देते थे तब भी चेहरा सौम्य व स्निग्ध बना रहता था। मुस्कुराहट क्षण भर के लिए स्थगित हो जाती थी। सजा समाप्त। वही मुस्कुराहट शुरू। फिर वही प्रश्नों का सिलसिला मंद-मंद आवाज में। फिर वही राजस्थान के भूगोल और दुनिया के भूगोल की नई-नई बातें। राजपूताना, हिन्दुस्तान और दुनिया का भूगोल तब क्रमशः अलग-अलग कक्षाओं (मिडिल कक्षाओं) में पढ़ाया जाता था। उन्हें पढ़ाना अच्छा लगता था। हमें पढ़ना अच्छा लगता था। हम भूल करते तो वे माफ करते और हलकी-सी चिकौटी काट कर मुस्कुराते रहते। वे नाराज होते तो मुस्कुराहट स्थगित और चमड़ी उठा दी जाती, उमेठ दी जाती। सुख-दुःख सब साथ थे। जीवन में उनका कुल प्रभाव बाद में ज्ञात हुआ। वह आज भी साथ है।

लेकिन उनकी इस महानता, इस निष्ठा, इस स्निग्धता को कौन जान सकता था? किसने जाना? डींग मारना तो दूर, वे न तो कभी मुख्याध्यापक के साथ बैठते थे और न कभी विद्यार्थियों या अध्यापकों के बीच। उन्होंने हमें कितना रुलाया, कितना हंसाया और कितना अध्ययनशील बनाया - इसकी सूचना किसी को कैसे होगी?

दूसरे अध्यापक थे। कोई नियमित पीरियड नहीं। शारीरिक शिक्षक थे। नाटा कद, स्थूल शरीर, मोटा पेट, मूंछे छल्लेदार। फुटबाल खिलाते थे। कभी-कभी खाली पीरियड में हमें चुप रखने उन्हें भेज दिया जाता। कसीदेदार, लम्बे नाक वाली, रंगीन जूतियां पहने चर्र-मर्र करते आते। डरावनी आंखें थीं। सहम कर सभी चुप हो जाते। वे पसरकर कुर्सी में धंस जाते। हिंदी, राजस्थानी, ब्रज, अवधी के कई पद उन्हें याद थे। बोलते, पूछते। कौन बताता अर्थ? पढ़ा ही किसने था। हंसते। ''बस यह भी नहीं जानते?'' और वे बुलंद आवाज में, किंतु धीमी गति से, अर्थ समझाते। कोई अंतर्कथा भी कह देते। हंस देते, सारी कक्षा को हंसा देते। कुछ तो लहजा, कुछ बातें ही ऐसी और कुछ रौब ऐसा कि उनका साथ देना जरूरी। सजा देने का ठेका भी इनका ही था। निष्ठापूर्वक आखिरी पीरियड के बाद मेंढ़क चाल, ऊठ-बैठ या डण्ड-डिप्स के द्वारा यथायोग्य सजा देना वे कभी नहीं भूलते। जिस रोज सजा मिलती उस रोज घर जाना मुश्किल हो जाता। लंगड़ाते हुए, कभी-कभी रोते हुए घर पहुंचते। हमारे और उनके संबंधों की पहचान हमारे सिवाय किसको हो सकती है? आज मैं जो कुछ करता हूं, जो कुछ सोचता हूं, जो कुछ लेखन करता हूं, उन सबमें उनका भी कोई हिस्सा जरूर है। सुख-दुःख सब साथ थे। कुल प्रभाव भी आज साथ है। सीना तानकर चलते थे। डींग मारने में भी आगे थे। कक्षा के बाहर कुछ भी होंगे, कक्षा के भीतर और सजा देते वक्त मैदान में, वे हमारे साथ जो व्यवहार करते थे उसकी बात मैं, केवल मैं ही, बता सकता हूं और वह यही कि वे एक बहुत अच्छे इंसान थे। हम उनसे उस वक्त प्रसन्न भी रहे और अप्रसन्न भी। आज उनका स्मरण करके मैं उनके प्रति आदर से भर जाता हूं। वे जो सजा देते थे उसका नाम भी सजा नहीं था, 'एक्स्ट्रा ड्रिल' था और आप समझ सकते हैं कि वह एक्स्ट्रा थी तो फिर एक्स्ट्रा ही होनी थी, असाधारण ही होनी थी। लेकिन हमें वह सजा कम याद है, उनका कक्षा में पसर कर मस्ती से साहित्यिक ज्ञान-चर्चा करना ज्यादा याद है। जब कभी कक्षा में पढ़ाते वक्त मैं ज्यादा गंभीर हुआ तो उनका स्मरण आते ही सहज हो गया और पाठ्यक्रम की लीक छोड़कर छंद, कविज्ञ, सोरठे, दोहे सुनाने लगा या निराला, अज्ञेय आदि के विविध रसास्वादन के काव्यांश सुना दिए। मैं जब पढ़ता था तब ये सब कोर्स में नहीं थे। राहूल और अज्ञेय के यात्रा-संस्मरणों की प्रशंसा करके पुस्तकालय में पड़ी उनकी पुस्तकों के नाम बता देता। विद्यार्थी टूट पड़ते। पढ़ते। यों मस्ती, आनन्द, सहजता और कुतूहल पैदा करने के इस तत्व के लिए उस शारीरिक शिक्षा के शिक्षक को याद कर लेना काफी है मेरे लिए।

शिक्षक का मूल्यांकन करने वाले सोचें कि कोई शिक्षाधिकारी या प्रधानाध्यापक या निरीक्षक किसी शिक्षक के बारे में, आज की पद्धति से, बाहर से कितना जान सकते हैं जबकि कक्षा के भीतर दिन भर शिक्षक के हर कार्य-कलाप को अंतर्मन से अनुभव करने वाला विद्यार्थी भी तत्काल कोई राय नहीं बना सकता, जान नहीं सकता। वह भी एक लम्बे अंतराल के बाद ही वास्तविकता के दर्शन कर पाता है। ◆

लेखक परिचयः शिविरा पत्रिका तथा नया शिक्षक/टीचर टुडे का 13 वर्ष संपादन। संयुक्त निदेशक (शिक्षा) पद से 1988 में सेवानिवृत्त। कुछ पुस्तकें लिखीं, कुछ का संपादन और अनुवाद किया। विशेष चर्चित पुस्तक 'आज की शिक्षा कल के सवाल'।